Date of Publication: 25 May 2014

कमल ज्योति

(मासिक पत्र)

वर्ष-8, अंक-2 जून 2014 विक्रमी संवत् 2070 सृष्टि संवत् 1960853113 एक प्रति का मूल्य 10/-रुपये सहयोग राशि 1100/-रुपये

ओ३म्

संस्थापक

भजनप्रकाश आर्य

संरक्षक

ओमप्रकाश हसीजा

प्रधान सम्पादक

आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री
चलभाष : 9810084806

सम्पादक

एल.आर. आहूजा
आचार्य शिव नारायण शास्त्री
अतुल आर्य
चलभाष : 9718194653
दूरभाष : 011-27017780

सहयोगी सम्पादक

प्रिंसीपल हर्ष आर्या
चलभाष : 9999114012
राजीव आर्य
चलभाष : 9212209044
नरेन्द्र आर्य 'सुमन'
चलभाष : 9213402628

मरणशील मनुष्यों का अमरदेव ही स्तुत्य

तमध्वरेष्ठीळते देवं मर्ता अमर्त्यम्। यजिष्ठं मानुषे जने॥ -ऋ 5.14.2

ऋषिः- **आत्रेयः सुतम्भरः॥** देवता-**अग्निः॥** छन्दः-**विराड्गायत्री॥**

शब्दार्थ-अध्वरेषु=सब यज्ञों में **मर्त्ताः**=हम मरणशील मनुष्य **तं अमर्त्य देवम्**=उस अमर-कभी न मरनेवाले-देव की ही **ईळते**=पूजा करते हैं जो देव **मानुषे जने**=प्रत्येक मनुष्य के अन्दर **यजिष्ठम्**=यजनीय है।

विनय- नाना प्रकार के यज्ञों में जो हम विविध कर्म करते हैं, असल में हम उन सब कर्मो द्वारा उस अमरदेव का ही पूजन करते हैं। हम मरणशील मनुष्यों को अमरदेव के ही यजन करने की आवश्यकता है। प्रत्येक यज्ञ-कर्म का प्रयोजन यही है कि हम उस द्वारा मृत्यु से पार हो जाएँ-अमर हो जाएँ। यज्ञ मर्त्य को अमर बनाने के लिए ही है, पर हम यज्ञों द्वारा जिस अमरदेव की पूजा करते हैं, वह अमरदेव है कहाँ? सुनो, वह अमरदेव प्रत्येक मानुष जन में है, प्रत्येक मनुष्य में 'यजिष्ठ' होकर विद्यमान है। हमें प्रत्येक मानुष में उसका यजन करना चाहिए, इसीलिए कहा जाता है कि यज्ञ सब मनुष्यों के हित के लिए होता है। यज्ञ का स्वरूप परोपकार है-एक-एक मनुष्य का हितसाधन है। मनुष्यों की सेवा करना ही यज्ञ करना है। जितना हम मनुष्यों की सेवा करते हैं-मनुष्यों की पीड़ाओं और दुःखों को दूर करने के लिए निःस्वार्थभाव से यत्न करते हैं-उतना ही हमारे ये कार्य यज्ञ होते हैं। अग्निहोत्र द्वारा किये जानेवाले पुराने ऋतु-यागादि भी आधि दैविक-देवों की अनुकूलता प्राप्त करके मनुष्य जनता के हित के प्रयोजन से ही किये जाते थे, पर इतने से भी यज्ञ का तात्पर्य पूरा नहीं होता। मनुष्यों की जिस किसी प्रकार की सेवा करने से यज्ञ नहीं हो जाता। हमें तो प्रत्येक मनुष्य में उस अमरदेव का ही यजन करना है। जिस सेवा से मनुष्य के अमरदेव की सेवा नहीं होती, वह सेवा सेवा नहीं है, वह सेवा-यज्ञ नहीं है। भोगविलास की सामग्री जुटाने से बेशक मनुष्यों की तृप्ति होती दीखती है, परन्तु यह मनुष्यों की सच्ची सेवा नहीं है। ऐसा 'परोपकार' यज्ञ नहीं, अयज्ञ है। इसी प्रकार भूखों को इस प्रकार अन्न देना, रोगियों को इस प्रकार औषध देना भी जो उनकी सच्ची उन्नति में, उन्हें अमर बनाने में-बाधक होवे, यह भी यज्ञ नहीं है, अर्थात् जनता की भौतिक उन्नति साधना तभी तक यज्ञ है जब यह भौतिक उन्नति आध्यात्मिक उन्नति के लिए ही हो। आध्यात्मिक उन्नति करना ही, दूसरे शब्दों में-मर्त्य से अमर बनना है। आओ, हम मर्त्य अमरदेव की पूजा करें, मनुष्य की ऐसी सेवा करने में अपने को खो देवें जो सेवा उनके बनने में सहायक हो।

गतांक से आगे

सामवेद संहिता

–श्रीमती प्रकाशवती बुग्गा

एते सोमा अभि प्रियमिन्द्रस्य काममक्षरन्।
वर्धन्तो अस्य श्रीर्यम् ॥
पुनानासश्चमूषदो गच्छन्तो वायुमश्विना। ते नो धत सुवीर्यम॥
इन्द्रस्य सोम राधसे पुनानो हादि चोदय। देवानां योनिमासदम्॥
मृजन्ति त्वा दश क्षिपो हिन्वन्ति सप्त धीतयः ।
अनु विप्रा आमादिषुः ॥
देवेभ्यस्त्वा मदाय कं सृजानमति मेष्यः ।
सं गोभिर्वासयामसि ॥
पुनानः कलशेष्वा वस्त्राण्यरूषो हरिः। परि गव्यान्यव्यत॥
मधोन आं पवस्य नो जहि विश्वा अप द्विषः।
इन्दो सखयमा विश ॥
नृचक्षसं त्वा वयमिन्द्रपीतं स्वविदम्। भक्षीमहि प्रजामिषम् ॥
वृष्टि दिवः परि स्रव द्युम्नं पृथिव्या अधि ।
सहो नः सोम पृत्सु धाः ॥814॥

सोमशक्तियों से इन्द्र जन की बल शक्ति बढ़ जाती है।
सभी कामना पूरी होती, कीर्ति दिशि दिशि छाती है।।
बुद्धि इन्द्रियां अन्तःकरण का, सोम प्रभु ही स्वामी है।
शीघ्रगति से मिले इन्द्र को, पाता बल वह नामी है।।
हे सोम इन्द्र को विजय दिलाने, बह बहकर तू आता जा।
अन्तःकरण को प्रेरित कर, इन्द्रियों को दिव्य बनाता जा।।
दसों इन्द्रियां ज्ञान कर्म से, तुझ को शुद्ध बनाती हैं।
ऊँचे ज्ञानी आनन्द पाते, सातों वृत्तियां ध्यान कराती हैं।।
हे सोम हम ज्ञानशक्ति से, अंगो को सुखी बनाते हैं।
ज्ञानरश्मियों से ढक कर तुझे, सुख संसार बसाते हैं।।
अंग-अंग को पुलकित करता, कीर्तिमान दुःखहारी है।
परमानन्द रस ज्ञान किरणों का, सुन्दर वस्त्रधारी है।।
ज्ञान-धनों से धनी बनें, वे ही भक्त तुझे पाते।
इन्द्र मित्र के साथी बन, द्वेषभाव का नाश कराते।।
तू ज्ञानी है तू ही इन्द्र है, तू ही सोम का पान करे।
उसी सोम को हम पावें जो जीवन उच्च महान करे।।
हे सोम तू प्रकाशलोक से, धरा पर तेज गिराता जा।
संघर्षों को सहन करें, वह शक्ति हमें दिलाता जा।।

सोमः पुनानो अर्षति सहस्त्रधारो अत्यविः।
वायोरिन्द्रस्य निष्कृतम् ॥
पवमानमवस्यवो विप्रमभि प्र गायत। सुष्वाणां देववीतये॥
पवन्ते वाजसातये सोमाः सहस्त्रपाजसः। गृणाना देववीतये॥
उत नो वाजसातये पवस्य बृहतीरिषः। द्युमदिन्दो सुवीर्यम्॥
अत्या हियाना न हेतृभिरसृग्रं। वि वारमव्यमाशवः ॥
ते नः सहस्त्रिणं रयिं पवन्तामा सुवीर्यम्॥ स्वाना देवास इन्दवः ॥
वाश्रा अषन्तोन्दवोऽभि वत्सं न मातरः। दधन्विरे गभस्त्योः॥
विश्वा अप द्विषो जहि।।
अपघ्नन्तो अराव्णः पवमानाः स्वर्दृशः। योनावृतस्य सीदत ॥815॥

सोम को धारा वहती आए, ज्ञान के परदे पार कर।
केवल इन्द्र की है मिलती, प्राणशक्ति को धार कर।।
रक्षा की यदि इच्छा है, दिव्य इन्द्रियों का चाहो भोग।
विचारशक्ति के विकसितकर्ता, पवमान प्रभु को गाओ लोग।।
दिव्यता देने वाला है जो, बह रहा यह सोम है।
ज्ञान बल को प्राप्त कर लो, कह रहा यह सोम है।।
आनन्ददाता सोम हमको, प्रेरणा महान दो ।
बल और शक्ति पा सकें, ऐसा हमें विज्ञान दो।।
ज्ञान किरण से प्रेरित हो, सोम ज्ञान से आता है।
ज्ञान-लाभ की शक्ति देकर, विज्ञान का दान कराता है।।
वह दिव्य सोम प्रेरणा दे, आनन्द का भान कराये।
अनेक शक्ति को देने वाली, संपत्ति से धनवान बनाये।।
धनु प्रेमपाश में बंधकर, वछड़ो के ढिंग जाती है।
सोम इन्द्र की बांहो में हो, इन्द्रियां प्रेरणा पाती हैं।।
सोम आनन्द का देने वाला, और इन्द्र का प्यारा है।
पवनमान प्रेरणा देता है, सोम द्वेष नशावन हारा है।।
संकीर्ण भाव का नाश करे, कल्याण का पथ दिखलाइए।
पवमान सोम हम सबको, परम सत्य कर्म में लगाए।।

सोमा असृग्रमिन्दवः सुता ऋतस्य धारया। इन्द्राय मधुमत्तमाः॥
अभि विप्रा अनूषत गावो वत्सं न धेनवः। इन्द्रं सोमस्य पीतये॥
मदच्युत क्षोति सादने सिनधोरूर्मा विपश्चित्।
सोमो गौरी अधि श्रितः ॥
दिवो नाभा विचक्षणोऽव्या वारे महीयते।
सोमो यः सुक्रतुः कविः ॥
यः सोमः कलशेष्वा अन्तः पवित्र आहितः। तमिन्दुः परिषस्वजे॥
प्र वाचमिन्दुरिष्यति समुद्रस्याधि विष्टपि ।
जिन्वन् कोशं मधुश्चुतम् ॥
नित्यस्तोत्रो वनस्पतिर्धेनामन्तः सबर्दुघाम् ।
हिन्वानो मानुषा युजा ॥
आ पवमान धारया रयि सहस्त्रवर्चसम्। अस्मे इन्दो स्वाभुवम्॥
अभि प्रिया दिवः कविविप्रः स धारया सुतः ।
सोमो हिन्वे परावति॥816॥

आह्लादक सिद्ध सोम यह बहता, परम सत्य की धारा से।
इन्द्रियजित के हित ही चलता, मधुरामृत की कारा से।।
प्रेममयी दुधारू गउएँ, बछड़ों को दूध पिलाती हैं।
ज्ञानशक्ति से भरी इन्द्रियां, इन्द्र को सोम दिलाती हैं।।
शुभ्र चित्त में बढ़ कर सोम, बुद्धि आनन्द देता है।
सागर सम लहराती वृत्तियों का, अन्तःकरण सहारा लेता है।।
ज्ञान प्रकाश केन्द्र सोम, चित्त के परदे पार करे।
क्रान्ति लाकर पूज्य सोम, शुभ कर्मो का विस्तार करे।
जो सोम इन्द्रियों का साक्षी, अन्तःकरण में धारा है।
आनन्द मिले इससे मिलकर, यही इन्द्र का प्यारा है।।
आनन्ददाता सोम बहाता, अन्तः करण से रसधारा।
प्रेरकवाणी का साथी यह, अमृतकोष दिलाने हारा।।
करें स्तुति हम पूज्य सोम की, योगसाधना आती है।
प्रेरित हो सुख वर्षा करके, साधक के मन भाती है।।
हे पवमान है आनन्ददाता, सुख के लिए सम्पति दान कर।
शक्ति देकर भांति भांति की, हम को ऐश्वर्यवान कर।।
गतिशीला सोम की धारा, ऊँचे विचार बनाती है।
दूर देश में सोम विराजे, ज्योति वहां से आती है।।

[क्रमशः]

गतांक से आगे

जीवन-मृत्यु का चिन्तन

–डॉ. महेश विद्यालंकार

मृत्यु हमें सावधान करती है-समय, साधन व जीवन के रहते हुए-"अगले जीवन के लिए कुछ सोच-समझ कर लो। फिर मत कहना-कुछ कर न सके। इसी जन्म में अगले जन्म की अग्रिम बुकिंग है। इसी जन्म के कर्मो के आधार पर अगला जन्म प्राप्त होगा। वर्तमान से ही भविष्य का निर्णय होता है। वर्तमान जीवन को सँभालो और सुधारो। यदि मन न सुधरे, तो इसे मृत्यु का भय दिखाओ। मन मृत्यु से डरता है। परमात्मा तथा मृत्यु का भय मन को सीधा रखने में अचूक दवा है। यदि मरने से पहले मनुष्य यह समझ ले कि जीवन तथा जगत् में राम का नाम व साथ ही सत्य है, तो मृत्यु के भय से छूटा जा सकता है। यही विडम्बना है कि मृत्यु के बाद ही 'राम नाम सत्य है', याद आता है, पहले नहीं। प्रभु का नाम-स्मरण मृत्यु को जीतने का अनुपम साधन है। तुलसीदास जी कहते हैं कि बड़े-बड़े ज्ञानी, मुनि, सन्त आदि जीवन-भर जप-तप-साधना करते हैं, फिर भी अन्तिम क्षणों में राम नाम मुख से नहीं निकलता है-

कोटि-कोटि मुनि जतन कराहीं,
अन्त राम मुख आवत नाहीं॥

शवयात्रा में जाते हुए सभी 'राम नाम सत्य है' बोलते चलते हैं, आते हुए कोई नहीं बोलता है। 'राम नाम सत्य है' यह तो आते हुए बोलने और याद रखने की सोच है। यह तो अपने को जगाने तथा समझाने का प्रेरणा-वाक्य है। शव के साथ चलते हुए बोलने के बजाय 'राम नाम सत्य है' जीवित रहते हुए सुनने व समझने की जरूरत है। दुनिया उसे सुनाती है, जो सुन नहीं सकता। शवयात्रा के बहाने साथ चलने वालों को रामनाम का संदेश दिया जा रहा है। उन्हें सत्यबोध कराया जा रहा है। मृत्यु की याद दिखाई जा रही है। जब भी कोई मरता है तो हमें चेतावनी दे जाता है कि तुम भी मरोगे। हमारे बाद तुम्हारा नम्बर है।

आम रिवाज है-मरने पर गीता पढ़ते और सुनते हैं। सत्य, तो यह है कि गीता जीवित रहते हुए पढ़ो, सुनो और उसके अनुसार जीवन चलाओ, तो अन्तिम समय में मृत्यु दु:खदायी नहीं होगी। गीता मृत्यु, शोक, चिन्ता तथा भय से छूटने का अमर सन्देश सुनाती है और जीवन को मृत्युंजयी बनाने का व्यावहारिक जीवन-दर्शन देती है। वह मृत्यु का स्वरूप बताती और छूटने के उपाय बताती है और आत्मा में अमरता की प्रेरणा जागृत करती है। श्मशान-भूमि पर जीवन और जगत् की नश्वरता तथा मृत्युबोध होता है। श्मशान पर ज्ञान और वैराग्य के भाव आते हैं। चित्त मृत्यु के बारे में सोचने के लिए मजबूर होता है। मन मृत्यु से डरकर सन्मार्ग पर चलने की सोचने लगता है। श्मशान-भूमि ज्ञान तथा वैराग्य की भूमि कहलाती है। श्मशान-भूमि हमें शरीर की नश्वरता और आत्मा की अमरता बताती है। शरीर की क्या कीमत है? आत्मा का असली स्वरूप क्या है स्मरण दिलाती है और परमात्मा की ओर प्रेरित करती है। जीवन में क्या खोया और क्या पाया, इनकी सोच जगाती है तथा जीवन को सँभालने और ज्ञानपूर्वक जीने की प्रेरणा देती है।

अज्ञान और भोगवासनाओं में फँसे इन्सान को श्मशानभूमि जगत् तथा जीवन के सत्य का बोध कराती है। यहाँ आकर सब बराबर हो जाते हैं। असली यात्रा यहीं से आरम्भ होती है। परन्तु आज बड़ी आश्चर्यजनक और विचित्र स्थिति हो रही है कि चिता में आग लगते ही लोग इधर-उधर की बातें करने और आपस में मिलने-जुलने लगते हैं और घर, परिवार, संसार, व्यापार आदि की बातें होने लगती हैं। क्रिया, उठाले, श्रद्धांजलि, शोकसभा, शान्तियज्ञ सभी रस्त अदायगी बनते जा रहे हैं। मृत्यु थोड़ी देर ज्ञान-वैराग्य, प्रभु-स्मरण उत्पन्न कराती है, परन्तु फिर हम वैसे के वैसे ही हो जाते हैं। अधिकांश लोगों के चित पर मृत्यु का भय, चिन्तन व सोच नजर नहीं आता है। जब भी कोई मरता है, हमें चेतावनी दे जाता है कि मृत्यु तुम्हारा भी दिनरात पीछा कर रही है। हम दूसरों की मृत्यु से कुछ भी नहीं सीख पा रहे हैं। एक दिन इसी तरह मृत्यु को हम भी प्राप्त हो जायेंगे। जाने वाला व्यक्ति हमें भूली हुई मृत्यु की याद दिला जाता है। मगर हम फिर बेसुध हो जाते है।

श्मशान पर जाने के बाद भी हम मृत्यु का विचार मन में नहीं ला पा रहे हैं। श्मशान हमें जीवनबोध देकर मृत्यु से छूटने का उपाय खोजने की प्रेरणा देता है। मगंर हम तो यह मानकर चल रहे हैं कि जीवन अनन्त है, हम नहीं मरेंगे। श्मशान पर काम करने वाले पण्डित, आचारज तथा वहां रहने वाले लोग साधु, सन्त, ज्ञानी, वैरागी व निर्लोभी होने चाहिए, जबकि वे अधिकतर लोभी, दुर्व्यसनी, अज्ञानी व झगड़ालू होते हैं। ये लोग मृत्यु को रोज देखते और बार-बार देखते हैं, फिर भी उन्हें ज्ञान तथा वैराग्य छू नहीं पाता है। जबकि मृत्यु मनुष्य के होश उड़ा देती है।

पश्चिम का विज्ञान मृत्यु पर विजयप्राप्ति के लिए खोज और कोशिश कर रहा है। अभी तक सफलता नहीं मिली है। जिस दिन सफलता मिल जायेगी, उसी दिन मोक्ष और परमात्मा की उपयोगिता व चिन्ता समाप्त हो जायेगी और जीवनदर्शन बदल जायेगा। संसार में जो दैवीय व्यवस्था चल रही है, उसमें हलचल मच जायेगी। विज्ञान की अपूर्णता है कि वह शरीर की चीरफाड़ तो कर देगा, मगर प्राण नहीं डाल सकेगा। जीवन प्रदान और वरदान की शक्ति को परमेश्वर ने अपने अधीन रखा है। मृत्यु ,परमात्मा की प्राकृतिक अटल व्यवस्था है। अभी तक अनेक प्रश्न विज्ञान के समक्ष रहस्य बने हुए हैं। विज्ञान की खोज तथा पहुँच स्थूल तक है। सूक्ष्मतत्त्व विज्ञान की पकड़ से

बाहर हैं। आत्मा-परमात्मा सूक्ष्म हैं। पश्चिमके पास आत्म-परमात्म के चिन्तन का अभाव है।

चिकित्साविज्ञान इतना उन्नत और विकसित हो गया है, मगर आज तक यह नहीं जान सका है कि शरीर में से आत्मा किस द्वार से निकलता है? वह आत्मा शरीर में कहाँ रहता है तथा उसका आकार क्या है? मृत शरीर को चिकित्साविज्ञान पुनः जीवित करने में असमर्थ है। उन्नत चिकित्साविज्ञान, डॉक्टर, दवाइयाँ आदि मृत्यु से बचाव के उपाय खोज रहे हैं, फिर भी मृत्यु रहस्य बनी हुई है। डाक्टर बीमारी पर विजय पा लेंगे पर मृत्यु पर नहीं। मृत्यु से सभी डरते हैं। अध्यात्म जीवन मृत्यु से अभय बनाता है। विज्ञान आज तक चेतनतत्त्व को नहीं बना सकता है। इन्द्रियाँ व शरीर वही हैं, मगर उसमें से चेतनतत्व निकल गया है, उसे कोई नहीं डाल सका। अब शरीर हिलता-डुलता नहीं है। चेतना-रहित होकर जमीन पर पड़ा है। कोई शक्ति उसे पुनर्जीवित नहीं कर सकती है। मृत्यु से बचने के लिए मनुष्य को अध्यात्म और परमात्मा की शरण में आना होगा। आध्यात्मिक चिन्तन मृत्युञ्जयी होने का एक मात्र उपाय है।

वेद में मृत्यु से छूटने की उपमा पके फल से दी गई है। वृक्ष का सार्थक फल वह माना जाता है, जो पककर डाल को स्वयं ही छोड़ देता है। यदि पका फल पेड़ पर लगा रहता है और डाल को नहीं छोड़ता, तो प्रकृति नियम से सड़ता और गलता हैं। ऐसी स्थिति ही मनुष्य जीवन की है। पूर्ण आयु प्राप्तकर शरीर पकने तथा शिथिल होने के बाद आत्मा द्वारा देह छोड़ने में ही कल्याण है। पत्ता पेड़ से पीला होकर टूटता व छूटता है। पीलापन पकने की निशानी है। पीला रंग ज्ञान की प्रधानता का प्रतीक है। पहले ज्ञानी बनो और अन्दर से ज्ञान, विवेक, वैराग्य, त्याग आदि के भाव जागृत करो, तभी जीवन तथा जगत् को सहजरूप से छोड़ सकोगे। सभी शास्त्र कहते हैं कि पककर और पूर्ण आयु को भोगकर संसार से जाओ। वेद का आदेश, उपदेश तथा सन्देश है-

मा पुरा जरसो मृथाः

हे मानव! तुम बुढ़ापे से पहले शरीर मत छोड़ो। पूर्ण आयु को भोगकर संसार से विदा होओ। अधूरे व असमय में जीवन समाप्त करो। पूर्ण आयु को प्राप्त मृत्यु को स्वाभाविक, सहज व कालमृत्यु कहा गया है। जब व्यक्ति अपने दायित्व व कर्तव्य को निभाकर और पूर्ण आयु भोगकर दुनिया से विदा होता है, तो उसे भारतीय परम्परा में गाजे-बाजे के साथ श्मशान तक पहुँचाते हैं। अन्त में शरीर की पूर्णता मृत्यु से ही होती है। मृत्यु अनेक दुःखों से छूटने का मार्ग है।

अच्छे जीवन-मृत्यु की उपमा अगरबत्ती से दी जाती है। अगरबत्ती जल जाती है, परन्तु पीछे सुगन्ध को छोड़ जाती है। ऐसे ही ज्ञानी, विचारक तथा कर्मशील मानव मृत्यु के बाद यश, कीर्ति तथा श्रेष्ठकर्मो और आचार-विचार वाली सन्तानें छोड़कर जाते हैं। वास्तव में मृत्यु तो जाने-आने का नाम है। इधर से गए, उधर से तुरन्त आ गए। चिन्ता, भय, शोक, पीड़ा आदि तब नहीं होते, जब यह पूर्ण विश्वास हो जाता है कि हम पुनः श्रेष्ठयोनि प्राप्त कर लेंगे। जैसे सूर्य नित्य अस्त होता है, तो कोई चिन्तित, दुःखी व परेशान नहीं होता, क्योंकि सभी को भरोसा एवं विश्वास है कि सूर्य फिर उदय होगा।

हम मृत्यु को अपने लिए जानने और मानने के लिए तैयार नहीं होते हैं। जब मान लेंगे कि मृत्यु निश्चित होगी, तो मृत्यु घटित होने पर हम भय, शोक, चिन्ता तथा दुःख अनुभव नहीं करेंगे। अधिकांश लोग शरीर व संसार को भोगने की दृष्टि से देखते तथा सोचते हैं। ज्यादातर लोग अनेक तरह के भोगपदार्थ व साधन जोड़ते हैं। शरीर तथा जगत् को छोड़ने का ध्यान मन में कभी नहीं लाते हैं। यही सोचते हैं कि हमें तो सदा यहीं रहना है। जब मृत्यु अचानक द्वार पर आ खड़ी होती है, तब आदमी घबराता, छटपटाता, बेचैन होकर मृत्यु से बचाव के लिए नाना प्रकार के पूजापाठ, धर्मकर्म, दान-पुण्य आदि करता है और गुरुओं, महन्तों, सन्तों तथा तीर्थो के पास भागता है, किन्तु मृत्यु के आगे सब व्यर्थ हो जाता है। मृत्यु की कोई तैयारी नहीं करता है। हम सब बिना तैयारी के काल को प्राप्त हो रहे हैं। तैयारी से मृत्यु सुखद व सुन्दर बन जाती है।

ज्यों-ज्यों उम्र बढ़ती जाए और जिम्मेदारियाँ और कर्तव्य पूरे होते जायें, त्यों-त्यों मनुष्य को अपने को समेटते, सँभालते व शान्त करते जाना चाहिए। नहीं तो बुढ़ापे में इन्सान परेशान, दुःखी व चिन्तित रहता है। आम आदमी अपने को संसार में फैलाना जानता है, उसे समेटने की कला नहीं आती है। उम्र के साथ ज्ञान, वैराग्य, त्याग, आत्मचिन्तन, प्रभुभक्ति आदि बढ़ाते चलना चाहिए। ये ही जीवन के रक्षाकवच है। शरीर छोड़ते समय तक व्यक्ति इतना ऊँचा उठा होना चाहिए कि वह अपने को परमात्मा के हाथों में सौंपा हुआ समझे। ऐसी स्थिति में मानव को मृत्यु भयभीत न कर सकेगी। जिसे मृत्यु दुःखी, चिन्तित और डरा न सके, वही मृत्युञ्जयी कहलाता है। शास्त्र कहते हैं कि जीवन को मृत्युञ्जयी बनाओ। जाना तो सभी को संसार से है, मगर महत्वपूर्ण बात यह है कि हम किस ढंग से जाते हैं, क्या लेकर और क्या देकर आते हैं और हमने जिन्दगी कैसे जी है।

मृत्यु से बढ़कर जीवन के लिए और कोई दुःखद घटना नहीं है। मृत्यु से होने वाला शोक, दुःख, वियोग, पीड़ा, चिन्ता आदि ज्ञान, धैर्य, प्रभु शरण से छूटते व कम होते हैं। भय आत्मज्ञान से छूटता है। गीता इसका प्रमाण है-अर्जुन मोहान्ध होकर कर्तव्य कर्म छोड़ चुके थे। **(क्रमशः)**

चिन्ता से चिन्तन और चिन्तन से चिरन्तन की ओर

–आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री

आज का मानव चिन्ता से ग्रस्त है, चिन्ता के स्थान पर हम चिन्तन करके जीवन में चिरन्तन को पा सकते हैं।

सिकन्दर जब भारत पर आक्रमण करने आ रहा था तब उसे रास्ते में एक यूनानी सन्त डायोजनिस मिला। वह बहुत शान्त, प्रसन्न, चिन्तामुक्त था, सिकन्दर उसके जीवन से बहुत प्रभावित हुआ। ठंड का मौसम था वह फकीर नदी के किनारे रेत पर धूप में लेटा था, सिकन्दर ने उसे प्रणाम किया और अपना परिचय दिया और कहा कि मैं भी विश्व विजय करने के बाद आपके पास आकर ही इस तरह का चिन्तामुक्त जीवन बिताना चाहता हूँ।

डायोजनिस उसकी मूर्खता पर हँसा और उसने कहा–यदि तुम शान्ति से ही रहना चाहते हो तो अभी से ही रहना शुरु कर दो। इतना उपद्रव करने की क्या आवश्यकता है, हो सकता है युद्ध में तुम मारे जाओ और वापस न आओ। पर सिकन्दर ने उसकी बात न मानी। युद्ध में वह मारा तो नहीं गया, परन्तु वापस लौटते समय रास्ते की गर्मी के कारण वह बीमार होकर मर गया और डायोजनिस के पास नहीं पहुँच सका।

शांति की खोज में लगे हुए आज के मानव भी अपना जीवन ऐसे ही बिता रहे हैं।

चिन्ता की परिभाषा– किसी दु:खद घटना, हानि या भय के आ जाने से हम उससे बचने के लिए जो तीव्रता से सोचना शुरु कर देते हैं, वह चिन्ता कहलाती है। विचारों की तीव्रता से हमारी सारी शक्ति शरीर से बाहर बह जाती है, और हम कांपने लगते हैं। चेहरा निस्तेज हो जाता है, जो हमें देखता है वही दु:खी हो जाता है। कई वर्ष लगातार यदि आदमी चिन्ता में रहे तो वह रोगी और अशान्त हो जायेगा।

आजकल हम देखते हैं मनुष्य धनवान हो, गरीब हो दोनों चिन्ता में है। जीवन की आपाधापी, दौड़-धूप, असफलता का भय मनुष्य को चिन्ताग्रस्त किये हुए हैं।

एक गरीब आदमी इस चिन्ता में है कि साइकिल पुरानी हो रही है, वह काम नहीं करती, किसी तरह से साइकिल के लिए पैसे जुटा लूँ और नयी साइकिल खरीद लूँ। दूर कहीं मजदूरी करने जाना है साइकिल जीवन की एक बड़ी आवश्यकता है। दूसरी ओर एक धनवान व्यक्ति जो अपनी कार में बैठकर जाता है वह इस चिन्ता में है कि मेरी कार तो साधारण सी है और किसी तरह अधिक धन कमा लूँ और कीमती कार खरीदूं। एक गरीब आदमी को जो नई साइकिल खरीदने पर खुशी होती है, वही खुशी धनवान व्यक्ति को बहुत महंगी कार खरीदने में होती है।

सुख की अनुभूति दोनों की एक-सी है। मनुष्य जब तक शरीर के तल पर जीता है वह धनवान हो या गरीब उसे सुख दु:ख की अनुभूति समान ही होगी।

मनुष्य शरीर को सुख पहुँचाने के लिए जीवन भर संघर्ष करता है और अन्त में यदि सुख भी मिलता है तो वैसा ही जैसे बच्चे को खिलौना मिलने पर होता है।

भारतीय संस्कृति के अनुसार मनुष्य की भौतिक आवश्यकताएं महत्वपूर्ण तो है परन्तु उससे भी कहीं अधिक आवश्यक है आत्मिक उत्थान।

चिंतन, मनन, निदिध्यासन के द्वारा अपनी चेतना के स्तर को बढ़ाना चाहिए तथा साधना करते हुए आनन्द स्वरूप चिरन्तन प्रभु को पाने का यत्न करना चाहिए।

पाश्चात्य लेखकों ने भी जीवन के सम्बन्ध में जो पुस्तकें लिखी हैं। उनका आशय है। हाउ टू विन फ्रेन्ड्स, हाउ टू वी सक्सेस फूल इन बिजनेस, हाउ टू स्टाफ वरी।

चिन्ता के सम्बन्ध में वे लोग साधारण सी बातें प्रस्तुत करते है, यथा–

आप यह सोचें कि जीवन में आपने इससे पहले कितनी चिन्ताएँ की और उनसे क्या लाभ हुआ? आप देखेंगे हमारा चिन्ता करना व्यर्थ था। वैसा ही अब भी हमारा चिन्ता करना व्यर्थ का काम हो सकता है। चिन्ता करने से मनुष्य की कार्य क्षमता घटती है। तो क्यों न चिन्ता छोड़कर हम अपने कार्य को ठीक ढंग से करें। चिन्तित व्यक्ति दु:खी होता है और उसके सम्बन्धी और मित्रजन उससे दूर भागने लगते हैं।

इस प्रकार चिन्ता से व्यक्ति दूसरे के सहयोग को खो देता है। कुछ अंशो में ऐसा चिन्तन भी ठीक है परन्तु हर व्यक्ति ऐसी बातें सोचकर चिन्तामुक्त नहीं हो सकता।

हमारी बहुत-सी चिन्ताएं व्यर्थ है। जैसे कि हम दूसरों से अपनी तुलना करते हैं। यदि हमारी पड़ोसी या कोई मित्र या सम्बनधी, किसी दिशा में आगे बढ़ गया है तो हमें यह चिन्ता घेर लेती हैं कि मैंने जीवन में कुछ नहीं किया और मुझे उससे आगे बढ़ना चाहिए।

दूसरों से तुलना करनेवाला व्यक्ति सदा अशान्त रहता है– मनुष्य अपनी रूचि और शक्ति के अनुसार अपनी सीमा में रहते हुए अपने कर्त्तव्य का पालन करें और भौतिक लाभ-हानि को स्वीकार करते हुए जीवन में अध्यात्म पैदा करें जिससे कि वह सुखी हो। **(क्रमश:)**

निर्भय बनो

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जो व्यक्ति जितना निर्भय, साहसी एवं संयमी होता है उसका जीवन उतना ही अधिक सफल होता है।

चंपारण्य के किसानों को एकत्रित करके गाँधीजी ने उन लोगों में प्राणबल फूँक दिया था जिसकी वजह से एंग्लोइण्डिन लोगों ने सभा करके यह फैसला किया कि 'कैसे भी करके इस बूढ़े गाँधी को मौत के घाट उतारना पड़ेगा' और इस कार्य हेतु एक दुष्ट व्यक्ति तैयार भी हो गया।

सायंकाल की प्रार्थना के समय किसी व्यक्ति ने आकर गाँधीजी को यह खबर दे दी कि: ''बापू! अमुक एंग्लोइण्डियन व्यक्ति ने निर्णय किया है कि वह कुछ ही दिनों में आपकी हत्या करेगा। अतः बापू! आप यहाँ से कहीं चले जाएँ तो अच्छा रहेगा। हमारा काम हम निपटा लेंगे।''

गाँधीजी ने उसकी बात को सुना-अनसुना कर दिया। प्रार्थना खत्म होते ही सब लोग अपने-अपने काम में लग पाये। रात्रि के करीब 12 बजे गाँधीजी को वह एंग्लोइण्डियनवाली बात याद आ गयी। गाँधीजी रात को 12 बजे उसके घर पर पहुँच गये। उस एंग्लोइण्डियन ने पूछा:

''Who are you?'' आप कौन है?''

गाँधीजी: गाँधी।''

एंग्लोइण्डियन आदमी ने दरवाजा खोला। गाँधीजी ने उसको सिर से पैर तक निहारा और उसमें भी रोम-रोम में रमनेवाले की प्रतीति करने लगे। एंग्लोइण्डियन: ''Are you Mr. Gandhi? क्या आप मि. गाँधी हैं?''

गाँधीजी: ''हाँ, आपने जिसकी हत्या करने का निश्चय किया है। जिसको 'जान से मार डालूँगा...' ऐसा निर्णय किया है मैं वही गाँधी हूँ। मैं अकेला ही आया हूँ। मेरे साथ न तो कोई व्यक्ति ही है और न ही मेरे पास कोई हथियार है। मेरे मित्र! आप अपनी इच्छा पूरी कर लीजिए। मैं कोई प्रतिक्रिया नहीं करूंगा।''

इतना कहते हुए गाँधीजी ने एक प्रेमयुक्त, मधुर नजर उस पर डाली। वह एंग्लो इण्डियन आखिर था तो मनुष्य ही। वह शर्म से पानी-पानी हो गया। उसने गाँधी जी के चरण पकड़ लिए और क्षमा माँगने लगा: ''Please Excuse me. कृपया मुझे माफ कर दीजिए। मुझसे गलती हो गयी....''

अगर हम भीतर से निर्भय रहें तो बाहर की कोई भी परिस्थिति हमें डरा नहीं सकती। अगर हम भीतर से भयभीत रहें तो फिर बाहर अनेकों सुरक्षाकर्मी एवं अंगरक्षक रखने पर भी भीतर भय बना ही रहता है।

एक दिन तो शरीर की मृत्यु होनी ही है तो फिर डरना क्यों? जिस समय मौत आयेगी उस समय कोई भी रक्षा करने में समर्थ नहीं हो सकेगा फिर मृत्यु का निमित्त चाहे जो बने और यदि बचनेवाले होगे तो खराब-से-खराब परिस्थिति भी तुम्हारा बाल तक बाँका नहीं कर सकेगी। अतः भय और चिन्ता किस बात की?

दुःख दूर करने के उपाय

एक व्यक्ति किसी सिद्ध पुरुष के पास पहुंचा और बोला-'महात्मा जी, कोई ऐसा वरदान दीजिये, जिससे मेरे सारे दुःख दूर हो जायें।'

'ठीक है, इसके लिए एक अनुष्ठान करना होगा। उसके लिए एक ऐसे व्यक्ति के कुर्ते की आवश्यकता होगी जिसे कोई दुःख न हो।'

'यह तो चुटकियों का काम है, मैं आज ही नगर में ऐसे किसी व्यक्ति की तलाश करके उसका कुर्ता ले आऊंगा।'

यह कहकर वह व्यक्ति नगर की ओर चल दिया। किन्तु सारे दिन वह घूमता रहा और जिस किसी ने भी उनसे पूछा, उसी ने अपना कोई न कोई दुखड़ा उसे बता दिया। निराश होकर वह शाम को लौट पड़ा पर संयोगवश उसने एक अलमस्त फक्कड़ फकीर को मार्ग के किनारे बैठे कुछ गाते हुए सुना तो उससे भी पूछ लिया, 'तुम्हें कोई दुःख तो नहीं है बाबा?'

'नहीं, मुझे रंचमात्र भी दुख नहीं है।'

वह व्यक्ति यह सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और बोला, 'तो बाबा! अपना एक पुरना ही चोगा दे दो। दुःख दूर करने के लिए अनुष्ठान करना है।'

फकीर ठहाका लगाकर हंस पड़ा और बोला, 'भोले भाई! मैं तो कुर्ता रखता ही नहीं, नंगे बदन रहता हूं। कुर्ता रहता तो फटने पर नया पाने की चिन्ता का दुःख हो जाता न!'

वह दुःखी व्यक्ति समझ गया कि दुःख को दूर करने का उपाय तो केवल त्याग ही है, कोई अनुष्ठान यह कार्य नहीं कर सकता। **-श्री सत्यानन्द आर्य**

वो कैसे कैसे लोग थे

जीए जो इस तरह जीए कहानियों में ढल गए
मरे तो इस तरह कि अर्थ मौत का बदल गए
धन्य थे वो लोग उनकी धन्य थी जवानियां
कि कायरों में प्राण फूंक जाए जो कहानियां
उनको उनकी मां ने घुटिटयों में क्या पिला दिया
जब हुए जवान तो जहान को हिला दिया
वे कैसे कैसे लोग थे.....

ये दिन थे हंसने गाने के सजने के संवरने के
मौहल्ले की किसी कली से पुस्तके बदलने के
किसी की मां दुलार से पुकारती रही मगर
किसी कि प्रेयसी सदा बुहारती रही डगर
वो मौत की दुल्हन भगा के जिंदगी का छल गए
वो कैसे लोग थे.....

वो निश्कलंक जिंदगी वो भेली भाली सूरतें
कि रोम रोम आज जिनकी याद में सिहर में उठे
गोलियां चली जहां खड़े मिले सदा वहां
आरती के वक्त बावरे कहीं निकल गए
वो कैसे लोग थे.....

हिंदु मुसलमान सिक्ख ईसाई नौजवान थे
नाम उनका जो रहा हो सब वतन के लाल थे
ब्रिटिश राज के लिए वही बने जो ढाल थे
मातृभूमि के लिए बन गए जो काल थे
वो कैसे कैसे लोग थे.....

अंडमान की हवाएं आज भी पुकारती
फांसियों की टिकटिकी हैरत से थी निहारती
ये कौन हैं जो पास आके मुस्कुराए हैं
ये किस धरा के लाल हैं ये कौन मां के जाएं
वे कैसे कैसे लोग थे.....

पाठकों से निवेदन

यदि आपका 'कमल ज्योति' हेतु शुल्क अभी तक जमा नहीं हुआ है या समाप्त हो गया है तो कृपया अपना शुल्क आजीवन 1100/- रुपये की दर से 'कमल ज्योति' के नाम मनिआर्डर/क्रास चैक से कार्यालय, डी-796, सरस्वती विहार, दिल्ली-110034 के पते पर शीध्र भेजें ताकि पत्रिका आपको लगातार मिलती रहे। अपना नाम, निवास का पूरा पता, कोड नम्बर, फ़ोन तथा मोबाईल नम्बर आदि सुन्दर व साफ़ शब्दों में लिखने का कष्ट करें। धन्यवाद!

-प्रबन्धक

नारी के उद्धार

'मा' जब मुझको कहा पुरुषने, तुच्छ हो गये देव सभी।
इतना आदर, इतनी महिमा, इतनी श्रद्धा कहाँ कभी?
उमड़ा स्नेह-सिन्धु अन्तरम में, डूब गयी आसक्ति अपार।
देह, गेह, अपमान, क्लेश, छि:! विजयी मेरा शाश्वत प्यार।।

'बहिन!' पुरुषने मुझे पुकारा, कितनी ममता! कितना नेह।
'मेरा भैया' पुलकित अन्तर, एक प्राण हम, हों दो देह।
कमलनयन अंगार उगलते हैं, यदि लक्षित हो अपमान।
दीर्घ भुजाओ में भाई की है रक्षित मेरा सम्मान।।

'बेटी' कहकर मुझे पुरुषने दिया स्नेह, अन्तर-सर्वस्व।
मेरा सुख, मेरी सुविधाकी चिन्ता-उसके सब सुख हस्व।।
अपने को भी विक्रय करके मुझे देख पायें निर्बाध।
मेरे पूज्य पिताकी होती एकमात्र यह जीवन-साध।।

'प्रिये!' पुरुष अर्धाङ्ग दे चुका, लेकर के हाथों में हाथ।
यहीं नहीं-उस सर्वेश्वर के निकट हमारा शाश्वत साथ।।
तन-मन-जीवन एक हो गये, मेरा घर-उसका संसार।
दोनों ही उत्सर्ग परस्पर, दोनों पर दोनों का भार।।

'पण्या!' आज दस्यु कहता है! पुरुष हो गया हाय पिशाच।
मैं अरक्षिता, दलिता, तप्ता, नंगा पाशवताका नाच।।
धर्म और लज्जा लुटती है। मैं अवला हूँ कातर, दीन।
पुत्र, पिता, भाई, स्वामी! सब तुम क्या इतने पौरुषहीन?

- सुदर्शन

अनमोल वचन

❖अत्याचारी से अभागा व्यक्ति कोई दूसरा नहीं होता क्योंकि विपत्ति के समय उसका कोई मित्र नहीं होता।

- शेख सादी

धर्म, संस्कृति एवं स्वास्थ्य की मासिक पत्रिका

कमल ज्योति

डी-796, सरस्वती विहार,
दिल्ली-110034

अपने जीवन की शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक उन्नति के लिए 'कमल ज्योति' पत्रिका अवश्य पढ़े और इष्ट मित्रों को भी पढ़ाएं। सदस्य बनें और बनाएं।

चाह गई चिन्ता गई

-शादी राम वर्मा

चाह गई चिन्ता गई, मनुवा बेप्रवाह।
जिसको कछु न चाहिए, सोई शहनशाह।।

यदि हम सर्व दुःखो की निवृत्ति चाहते हैं तो उपरोक्त सन्त वाणी पर गम्भीरता से विचार करना होगा। यदि हमारे दुःखो का कारण आने से भिन्न कोई और है तब तो हमारे दुःखो का निवारण सम्भव ही नहीं है। जब-जब जीवन में किसी दुःख की अनुभूति हो तो तब विचार करना चाहिए कि यह दुःख मुझे क्यों हो रहा है। शारीरिक दुःख का कोई बाह्य कारण हो सकता है और उसका उपचार भी सम्भव है। परन्तु मानसिक कष्ट का कारण यदि मैं अपने को नहीं मानूंगा तब इसका निवारण किसी भी प्रकार सम्भव नहीं। संसार की पहुंच शरीर तक है, हमारे मन तक नहीं। किसी की क्या मजाल कि भय, चिन्ता और अशान्ति को मारे मन में धकेल सके। कोई हमारे ऊपर अप-शब्दों की बौछार कर सकता है। हमारे किसी अधिकार को छीन सकता हैं अथवा हमारे साथ कोई अन्याय कर सकता है। परन्तु बाह्य घटना का प्रभाव मन के भीतर हम स्वयं ले जाते हैं। बाहर की घटना तो उस समय तक एक वास्तविकता है जब तक वह घटित हो रही है। परन्तु भीतर जाकर वही घटना एक अनुभव बनकर मन में संस्कारित हो जाती है। उसी संस्कार से स्मृति पैदा होकर हमें सुखी-दुःखी करती रहती है। बेचारा बाहर का संसार हमें नहीं बांधता अपितु भीतर का संसार ही हमारा व्यक्तिगत संसार बनकर हमें उलझाए रखता है। कटु एवं मीठे अनुभवों का यह संग्रह न तो भूतकाल को मिटाने देता है और न ही भविष्य के स्वप्न देखना बन्द होने देता है वास्तविक जीवन तो वर्तमान में है। परन्तु जी हम भूत और भविष्य में रहे हैं। हमने कभी भी वर्तमान को ताजा दृष्टि से नहीं देखा। जब भी देखा भूतकाल की बासी दृष्टि से ही देखा। या तो भय से आशांकित होकर देखा अथवा सुख की आशा को लेकर देखा।

सुख की आशा वाली दृष्टि ने ही वर्तमान में दुःख दिया और इच्छा के विपरीत घटना ने भूतकाल के भय को पुष्ट किया। आशा और आशंका ने वर्तमान को सही रूप में देखने नहीं दिया। जीवन तो वर्तमान में है परन्तु हम कल्पनाओं के संसार में जी रहे हैं। हर समय यही खटका रहता है कि कहीं हमारे भीतर के संसार में कोई झटका न लग जाए। भीतर के संसार को सुरक्षित रखने की चाह महज एक धोखा है। इसमें सुरक्षा की कोई गारंटी नहीं। कोई भी अप-शब्द, कोई भी घटना इस सुरक्षा को तहस-नहस कर सकते हैं। साथी तो बाहर रहते हैं परन्तु उनकी ममता भीतर रहती है। धन तो बाहर के बैंक में जमा रहता है परन्तु उनके लगाव की डोरी मन के खूंटे से बंधी है। इसीलिए तो बाहर की घटना भीतर में खलबली पैदा कर देती है। जब तक भीतर का संसार बना रहेगा अथवा हम इस भीतर के संसार में जीते रहेंगे तब तक एक तो जीवन की वास्तविकता से दूर रहेंगे और दूसरा सुख-दुःख के थपेड़े झेलते रहेंगे।

भीतर के संसार की सुरक्षा के लिए ही तो जीवन में बेइमानी है, संघर्ष है, आन्दोलन है, घोटाले हैं और युद्ध है। भीतर के संसार की सुरक्षा के भय ने बाहर के जीवन में खतरे पैदा कर दिए हैं। हमारा व्यवहार कितना स्वार्थ परायण हो गया है। कभी किसी से ठीक प्रकार से मिले नहीं। यदि मिले होते तो उसका दुःख दिखाई देता। उसकी जरूरत पर ध्यान जाता। उसकी प्रसन्नता हमें आहादित करती। उसके साथ एक आत्मीयता एवं प्रेम का नाता दिखाई देता। परन्तु स्वार्थ हमें अन्धा बना देता है। अपनी ही भूख नहीं मिटती तो किसी को क्या देंगे। दूसरे के लिए न ही कोई सहानुभूति है और न ही प्यार के दो शब्द। यह भीतर का संसार हमारे लिए एक बहुत बड़ा अभिशाप बनकर रह गया है। हम इसी के भक्त हैं, इसी के शुभ चिन्तक एवं इसी के सेवक। परन्तु क्या हम जानते हैं कि इसकी दोस्ती कितनी महंगी पड़ती है। इसने हमें कितनी बार चिता की अग्नि में जलाया, कितनी बार जननी के पेट में उल्टा लटकाया। इसी की प्रसन्नता के लिए हम भय, चिन्ता और अशान्ति की चक्की में पिसते रहे। यह भीतरी संसार शत्रु होता हुआ भी मित्र जैसा दिखाई देता है। ऐसे कातिल को घर में पनाह देना अपनी नींद हराम करना है। इसलिए हम यदि अपना घर आबाद करना चाहते हैं तो इस मेहमान को रूखसत करना ही होगा। सन्त बुल्ले शाह भी कहते हैं कि-

मर वे आड़िया मर वे, तेरे मोइयां वस्दाई घर वे।

इस भूत और भविष्य का नाश करने के लिए यदि हम केवल चाह को छोड़ सकें तो दोनों से छुटकारा मिल सकता है। बिना किसी आशा के यदि हम भविष्य को वर्तमान में पर्दापण करने दें और उसका स्वागत करें तो हम उसका एक वास्तविकता के रूप में सामना कर सकते हैं। वर्तमान की चुनौती का सामना करते समय प्राचीन संस्कार उदय होंगे। यदि हम उनको भी उस चुनौती का अंग मान लें और केवल तटस्थ होकर दोनों को देखें तो शान्त अवस्था में से उस चुनौती का प्रत्युतर स्वतः प्रकट होगा। यह एक ऐसा सही कार्य होगा जिसका कोई नया संस्कार नहीं बनेगा। इस प्रकार प्राचीन संस्कार प्रकट होते रहेंगे और हमारा समर्थन न मिलने के कारण मिटते रहेंगे। भीतरी संसार में नया तो कुछ जमा न होगा अपितु पुराना खाली होता जायेगा। जगत् के चिन्तन से जब भीतर खाली हो जायेगा तब वहां एक अपूर्व आनन्द-दायक शान्ति भर जायेगी। इस भीतर के खजाने का स्वामित्व ही शहन-शाहत है। आशा और भय सदा के लिए विदा हो जाएंगे। केवल प्रेम पूर्वक व्यवहार होने लगेगा। बिना इस प्रेम को प्राप्त किए जीवन का क्या औचित्य है। शरीर के रहने अथवा न रहने से इस प्रेम में कोई व्यवधान नहीं पड़ता।

गर्मी की व्याधियों के उपचार में वनस्पतियों का योगदान

- डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम, कानपुर

प्रकृति का ऐसा विधान है कि प्रत्येक मौसम में मौसम के मुताबिक एवं जरूरी गुण-तत्वों से भरपूर वनस्पतियां यथा फल-फूल, शाक-सब्जी आदि मिलते रहें। मौसम के मुताबिक फलों और शाक-सब्जियों का इस्तेमाल आरोग्यता व ताकत बढ़ाने वाला साबित होता है। प्रकृति की इन रोग नाशक वनस्पतियों की उपयोगिता की आयुर्वेद के मनीषियों ने पूर्ण रूप से जानकारी हासिल की। वनस्पतियां निरापद, सुगमता से सर्वत्र सुलभ तथा कम मूल्य में प्राप्त हो जाती है, जबकि आधुनिक चिकित्सा पद्धति की औषधियां नुकसानदायक, अधिक मंहगी होने के साथ रोग को जड़ से शमन न करके अन्य व्याधियों को अलग से पैदा कर देती हैं। इसलिए भारत के खासतौर से कम आय वाले लोगों को प्रकृति प्रदत्त अनमोल वनस्पतियों (जड़ी-बूटियों) का प्रयोग अधिक मात्रा में वरूधियों के शमन करने में करना चाहिए।

ग्रीष्म ऋतु में लू लगना, तृषा, हैजा, दस्त, अतिसार (पतले दस्त), वमन, चक्कर, बेचैनी, जलन, शरीर में गर्मी, कमजोरी, शिथिलता, जलीयांश की न्यूनता आदि तमाम रोग हो जाते हैं। इन व्याधियों से छुटकारा पाने में वनस्पतियों का विशेष योगदान पाया जाता है। वनस्पतियों द्वारा इलाज निम्न ढंग से किया जा सकता है-

उड़द- सनबर्न (अंशुघात) से निदान के लिए एक चम्मच उड़द की पिसी हुई दाल में दही मिलाकर झुलसी हुई त्वचा पर लगाएं। 15 मिनट बाद ठंडे पानी से धो डालें।

तरबूज- तरबूज के गूदे का रस थोड़ी-सी मिश्री मिलाकर प्रातः काल पीने से बार-बार प्यास लगने की बीमारी दूर हो जाती है।

बादाम- गर्मी के दिनों में बादाम, सौंफ, काली मिर्च, गुलाब के फूल, खरबूजे या ककड़ी के बीज, मुनक्का, गुलकंद तथा कासनी को मिलाकर ठंडाई घोंटे तथा उसमें शहतूत का रस मिलाकर पिएं, तो काया को ठंडक मिलती है।

धनिया- धनिया का प्रयोग आंखो की जलन, खांसी, दमा, उल्टी, बवासीर व आंव में विशेषकर किया जाता है। गर्मियों में धनिया के सेवन से ठंडक पहुंचती है, लू से बचाव होता है, प्यास नहीं लगती। नकसीर में भी धनिया लाभदायक है। शरीर में उष्णता की वृद्धि होने से दाह या जलन की अनुभूति होने लगती है। यदि गन्ने के रस में थोड़ा-सा हरे धनिया की पत्तियों का रस अथवा धनिया के दानों को फुलाकर निकाले गए रस को मिलाकर पिया जाए, तो पर्याप्त लाभ होता है तथा दाह (जलन) शांत होती है। नाक से खून आने पर ताजा धनिए के पत्तों का रस रोगी को सुंघाएं तथा हरे पत्तों को पीसकर मस्तक पर लेप करें, तो गर्मी के कारण नाक से खून बहना बंद हो जाता है।

नारियल- नारियल का पानी को ताजगी प्रदान करता है। हरे नारियल का पानी पीने से प्यास और घबराहट दूर होती है। लू लग जाने पर नारियल के पानी के साथ काली जीरा पीसकर शरीर पर लेप करने से शांति मिलती है।

बेल- बेल का शर्बत पेट के लिए लाभकारी है। बेल का शर्बत पीने से लू नहीं लगती और यह जलन दूर कर देता है।

अन्नास- गर्मियों के दिनों में प्रतिदिन अन्नास का रस पीने से तरो-ताजगी एवं ठंडक मिलती है, प्यास बुझती है। खाली पेट अन्नास का रस पीने से गर्मी शांत होती है। गर्मी के कारण बेचैनी होने पर अन्नास का रस पीने से लाभ होता है। इससे बेचैनी दूर हो जाती है।

काली मिर्चः कालीमिर्च के पांच दाने तथा 10 ग्राम हरी रतनजोत-दोनों को पानी के साथ पीसकर ठंडाई-सी बना लें। फिर उसे कपड़े से छानकर आवश्यकतानुसार मिश्री मिलाकर पिएं। इस औषधि का नियमित रूप से सेवन करने से गर्मी के कारण हाथ-पांवों का जलना हैं। जब तक ये सभी रोग पूरी तरह ठीक न हों, तब तक इस औषधि का सेवन प्रतिदिन सुबह-शाम करें।

चंदनः लू लग जाए, तो हाथ-पैरों पर चंदन घिसकर लगाना और चंदन का शर्बत पुदीने के रस के साथ देना चाहिए।

मेथीः लू लग गई हो, तो मेथी की सूखी पत्तियों को ठंडे पानी में भिगोकर थोड़ी देर बाद मलकर छान लें। उसका अर्क निकालकर थोड़ा शहद मिलाकर पी लें। लू का असर तुरंत खत्म हो जाएगा।

दहीः गर्मी के दिनों में शरीर की गर्मी तथा बेचैनी को दूर करने के लिए दही की लस्सी बनाकर उसमें थोड़ा पिसा हुआ सेंधानमक और भुना हुआ जीरा मिलाकर पीने से गर्मी और बेचैनी दूर होती है, साथ ही शरीर में सफूर्ति तथा दिमाग में ताजगी आती है।

खरबूजाः खरबूजे के नियमित सेवन से आलस्य नहीं आता और लू नहीं लगती। खाना खाने के बाद 250 ग्राम खरबूजा खाने से पेट की गर्मी दूर हो जाती है। खरबूजे के सूखे बीजों को देशी घी में तलकर खाने से चक्कर आने बंद हो जाते हैं।

आमः मीठे आम का गूदा लेकर 250 ग्राम दही और जरूरत के मुताबिक चीनी मिलाकर लस्सी की तरह मथकर रस बना लें। एक गिलास रोजाना पीने से लू से बचाव होता है या लू लगने पर कच्चे आम को भूनकर बनाया गया पना रोगी को तेजी से फायदा पहुंचाता है। अगर कच्चे आम को नमक लगाकर खाया जाए, तो प्यास बुझती है और पसीने के साथ हुए नुकसान की भरपाई भी होती है।

मेंहदीः लू और गर्मी के असर को भी मेंहदी कम करती हैं। मेंहदी के पत्तों को पानी में पीसकर पांव के तलवों में लेप कर देने से शरीर की गर्मी दूर हो जाती है।

खीराः खीरे का रस व नींबू का रस मिलाकर लगाने से झुलसी त्वचा ठीक होती है।

प्यासः एक चम्मच प्यास का रस व एक चम्मच अदरक का रस मिलाकर सेवन करने से बदहजमी दूर हो जाती है व उल्टियां बंद हो जाती हैं।

YOG: A WAY OF LIFE

-Purushottam Kumar

Yog is wonderful gift of Indian cultural heritage. It has proved to be a complete science to provide cure and prevention to various ailments vis-a-vis to provide complete health of body, mind and soul. Health is the combination of physical fitness, mental peace and spiritual gain. The physical fitness envisages internal and external health. The external health pertains to the fitness of body parts externally visible whereas the internal health pertains to the health of various internal systems viz. nervous system, glandular system, respiratory system circulatory system, digestive system, excretory system, skeletal system and muscular system which are not visible but each contributes towards the total health of human being. Mostly, the people follow shortcut methods to attain good health like external workout from P.T. sports and various muscular exercises viz. gymnastics, Aerobics etc. with a view to secure instant result in health. But the real health can be secured from yog which apart from toning up the internal organs and systems of the body, brings mental peace, emotional balance and spiritual benefits in life.

It is quite strange that one finds happiness only in materialistic world viz, money, property, status etc. whereas the real happiness is derived in complete health and reasonable minimum wealth. The concept and philosophy of happy life should be understood in real terms. One should derive joy from healthy body, mind and soul and this is the basis of perfect health. The perfect health also inculdes various other characteristics or features viz. discipline, love non-violence, knowledge, welfare attitude, peace, determination, purusharth etc.

It is ridiculous that one does not find time for caring about one`s health on the pretext of paucity of time. He is so ignorant about the joy of healthy life that he is just carried away by the routine life which does not have any slot for health care. He is forced to take care of his health whenever there is any breakdown in the health. In order to avoid such breakdown in life, it is utmost essential to assign top priority to health in life. Other activities in life can be followed successfully if health is alright. Sooner this principle is understood, better it is. Lot of tasks are to be performed in a limited time. The wisdom lies in prioritizing the tasks vis-a-vis the time available. Then one should draw out an action plan to carry out the tasks. One should also make regular analysis of the tasks performed so as to know the pitfalls, errors or lacunas which may be kept in mind in future for rectification in the actions and behaviour. The self-introspection will lead towards purification of action and cleansing of mind.

Yog is a way of life to live happily and purposefully. It is an art of creative and healthy living with happiness. It is a science of complete health-physical, mental and spiritual. One should start yog practice under the guidance of a yog teacher so that proper asans and pranayams may be advised to him and practical learning is also ensured as the practice of asans and pranayams depends upon the age, physique, constitution, ailment and other peculiar features of the sadhak/sadhika. Yog is the only way to provide curative methods for getting rid of ailments. In addition, it maintains balance of mind with sense of confidence and determination. Thus, yog is a unique gift of our cultural heritage which should be preserved and used for the welfare of mankind.

जलता हुआ अंगारा है

आर्य समाज इस भूमण्डल पर जलता हुआ अंगारा है।
आर्यवीरों ने इसके खातिर, अपना जीवन वारा है।
विश्व क्षितिज पर रहा चमकता वीरों के बलिदान से।
सत्य डगर पर बढ़ा निरंतर, लड़ा सदा अज्ञान से।
इसके आने से देश-धर्म का चमका पुनः सितारा है।।
आर्य समाज इस भूमण्डल का जलता हुआ अंगारा है।।
भ्रम का भूत भगाने वाला, पोपों का गढ़ ढाने वाला।
वेदों के सद्ज्ञान के द्वारा, फैलाता मन में उजियाला।
पाखण्ड, अविद्या, गुरुडम रूपी नागों को ललकारा है।।
आर्य समाज इस भूमण्डल का जलता हुआ अंगारा है।।
मजबूत कवच हिन्दू जाति का रक्षक पोषक कहलाया।
वैदिक धर्म का विघटन रोका, आर्यो ने सम्बल पाया।
'कृण्वतोविश्वमार्यम्' का फिर गगन में गूंजा नारा है।
आर्य समाज इस भूमण्डल का जलता हुआ अंगारा है।।
आडम्बर और कुरीतियों पर करता है व्यापक संधान।
इसी भट्टी में तप जाने पर कुन्दन बन जाता इंसान।
अमर हो गया 'संजय' जग में, जिसने इसे स्वीकारा है।।
आर्य समाज इस भूमण्डल का जलता हुआ अंगारा है।।
आर्य बनें शुभ कार्य करें, ऋषिवर ने हमें पुकारा है।
लाला लाजपत, हंसराज जी, लेखराम सरदारा है।
गुरुदत्त विद्यार्थी, श्रद्धानन्द ने, इसको खूब संवारा है।।
आर्य समाज इस भूमण्डल का जलता हुआ अंगारा है।।

- संजय सत्यार्थी, आर्य सदन,
नेमदारगंज, नवादा-बिहार

आर्य समाज सरस्वती विहार का 36वां वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्य समाज सरस्वती विहार का वार्षिकोत्सव दिनांक 01.05.2014 से 04.05.2014 तक बड़े उत्साह एवं शोभा से मनाया गया। इसमें दो विशेष कार्यक्रम गायत्री महायज्ञ एवं गीताज्ञान प्रवचन था। यज्ञ ब्रह्मा एवं गीता ज्ञान कथाकार प्रसिद्ध वेद विद्वान एवं प्रवक्ता आचार्य श्री अखिलेश्वर जी थे तथा साथ ही वेदपाठी श्री अशोक शास्त्री थे।

दिनांक 01.05.2014 से दिनांक 03.05.2014 तक प्रतिदिन दो सत्र चले। पहला सत्र प्रात: 6.15 से 8.00 बजे तक तथा दूसरा सत्र सायं 5 से 7 बजे तक रहा। इन सत्रों में एक घंटा गायत्री यज्ञ तथा एक घंटा गीता की कथा का पाठ हुआ। प्रत्येक दिन यज्ञ में दो-दो, तीन-तीन बड़े कुंड लगाए गए, जिनके चारों ओर यजमान गले में पीले दुपट्टे पहने हुए बैठे तथा बड़ी श्रद्धापूर्वक तथा अनुशासित ढंग से ब्रह्मा जी द्वारा यज्ञ सम्पन्न हुआ तत्पश्चात् आचार्य जी द्वारा गीता प्रवचन हुआ। उनके द्वारा गीता के 16वें अध्याय की प्रतिदिन व्याख्या हुई जिसमें दैवी एवं आसूरी प्रवृति का वर्णन है।

अन्तिम दिवस रविवार दिनांक 04.05.2014 को प्रात: 7.00 बजे से गायत्री यज्ञ प्रारम्भ होकर प्रात: 8.30 बजे तक गायत्री महायज्ञ की पूर्णाहुति हुई। पश्चात् सब बहन-भाईयों को जलपान कराया। प्रात: 9.00 बजे से 9.30 बजे तक भजन हुए। 9.30 बजे से 10.15 तक श्री नरेन्द्र मैत्रेयी जी द्वारा वेद प्रवचन हुआ। 10.30 बजे से 11.30 तक आचार्य अखिलेश्वर जी ने गीता के 16वें अध्याय का समापन करते हुए यजमानों को फल भेंट कर आशीर्वाद दिया।

कार्यकारी प्रधान श्री ओम् प्रकाश आर्य परमपिता परमात्मा का तथा सभी कार्यकर्ताओं तथा उपस्थित महानुभावों का एवं दानियों और इस कार्यक्रम में सहयोग देने वाली बहनों एवं भाईयों को धन्यवाद किया। शान्तिपाठ एवं ऋषि लंगर के साथ वार्षिक कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

स्वर्ग-नरक परमात्मा के हाथ में नहीं है, तुम्हारे खुद के हाथ में है। तुम हर समय अपने साथ स्वर्ग-नरक लेकर घूम रहे हो। जब तुम किसी का सहयोग करते हो तो स्वर्ग में होते हो। जब किसी की निंदा करते हो तो नरक में होते हो। प्रेम से भरे हो तो स्वर्ग में हो। क्रोध में जल रहे हो तो नरक में हो। साधु याचना और आलोचना से दूर रहता है। उसका स्वर्ग यही है। मन शांत है और श्मशान में भी बैठे है तो आप स्वर्ग में है। मन में उथल-पुथल है और आप मंदिर में भी बैठे तो भी नरक ही भोग रहे हो।

RNI No.DEL BIL/2008/25452 Total Pages 12 ओ३म् Posting Date 5 or 6 June 2014 DL (N)0225/2012-14

प्रेषक Date of Publication: 25 May 2014

कमल ज्योति

जून 2014 (मासिक) एक प्रति का मूल्य 10 रुपये

डी-796, सरस्वती विहार, दिल्ली-110034,

फोन : 27017780

सेवा में _____

महान आत्माएं फल वाले वृक्ष के समान होती हैं, जो स्वयं कड़कती धूप में रह कर दूसरों को शीतल छाया तो प्रदान करते ही हैं और साथ ही अपने स्वादिष्ट तथा मीठे फल दूसरों को खिलाकर उनकी क्षुधा तृप्त भी करती हैं। ठीक इसी स्वभाव की थीं–श्रीमती ओम कुमारी पाहूजा

सब की प्रेरणा स्रोत, मार्ग दर्शक, आदर्श एवं त्याग और तपस्या की प्रतिमूर्ति

पुण्यात्मा स्व. श्रीमती ओम कुमारी पाहूजा

सरल, सरस, सहृदया, परोपकारिणी, दानी, ईश्वर भक्त, स्व. श्रीमती ओम कुमारी पाहूजा को शत्-शत् नमन।

31.12.1939–15.05.2014

जीवन के हर क्षण में आपके द्वारा दिखाया गया सच्चाई, कर्त्तव्य एवं निष्ठा का मार्ग हमें हमेशा सही दिशा में बढ़ने की प्रेरणा देता रहेगा।

परमपिता परमात्मा आपकी आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

श्री राजीव पाहुजा (पुत्र)	श्री रविन्द्र वर्मा (दामाद)	श्री विपीन खुराना (दामाद)
श्रीमती वन्दना पाहुजा (पुत्र वधु)	श्रीमती सुषमा वर्मा (सुपुत्री)	श्रीमती नीरू खुराना (सुपुत्री)
श्री देवंश-श्री लक्ष्य (पौत्र)	श्री सौरभ वर्मा-श्री सिद्धार्थ वर्मा (दौते)	कु. सुरभी-कु.सुरुची (दौतीयां)

माता कमला आर्या स्मारक ट्रस्ट एवं 'कमल ज्योति' परिवार के सभी सदस्य

-अतुल आर्य

स्वामी-माता कमला आर्या स्मारक ट्रस्ट (रजि.) के लिए मुद्रक, प्रकाशक तथा सम्पादक एल.आर. आहूजा, चलभाष : 9810454677 द्वारा मयंक प्रिन्टर्स, 2199/64, नाईवाला, करौलबाग, नई दिल्ली-5, दूरभाष : 41548504 मो. 9810580474 से मुद्रित। कार्यालय : डी-796, सरस्वती विहार, दिल्ली-110034 से प्रकाशित